प्रेस की आजादी के नाम पर राष्ट्र-निंदा की छूट?

"सत्ताइस अक्टूबर का वह काला दिन है जिस दिन भारत ने कश्मीरियों से आजादी का हक छीन लिया था और रात के अंधेरे में आकर कश्मीर पर कब्जा कर लिया था। गुलाम कश्मीर पर भारत के गैर कानूनी कब्जे के 67 साल गुजर चुके हैं। हर साल लाइन आफ कंट्रोल के दोनों तरफ और दुनिया में रहने वाले कश्मीरी 27 अक्टूबर को काला दिवस इसलिए मनाते हैं ताकि संयुक्त राष्ट्र संघ और दुनिया भर के लोगों का ध्यान जम्मू कश्मीर पर भारत के गैर कानूनी कब्जे की ओर ध्यान दिलाए। 27 अक्टूबर, 1947 को देश के विभाजन के बाद भारतीय फौज श्रीनगर में दाखिल हुई और कश्मीरियों की भावनाओं को नजरंदाज करके जम्मू कश्मीर पर जबरन कब्जा कर लिया। रियासत जम्मू कश्मीर कभी भारत का हिस्सा नहीं थी.... भारत ने फौज की मदद से जबरन कब्जा कर लिया। भारत फौजी ताकत से कश्मीर पर काबिज है।... हिन्दुस्तान की आठ लाख फौज ने जुल्म व जबर के तमाम हथकंडे अपनाए मगर कश्मीरियों के दिलों–दिमाग से आजादी की तमन्ना और आरजू खत्म नहीं कर सकी।... पाकिस्तान को कश्मीर की आजादी के लिए अपनी भूमिका निभानी चाहिए... कश्मीर का पाकिस्तान में विलय एक नारा नहीं है बल्कि कश्मीरियों के ईमान का हिस्सा है। पाकिस्तान कश्मीरियों की आशा का केंद्र है। .... भारत के ओर से युद्ध विराम का जिस तरह उल्लंघन किया जा रहा है उसके खिलाफ विश्व अदालत में भारत के खिलाफ मुकदमा दायर किया जाना चाहिए।"

यह विचार जमात–उद–दावा के आतंकवादी गिरोह के सरगना हाफिज सईद के नहीं हैं। उनके भी नहीं हैं जो भारत के खिलाफ नित्य जेहाद का दम भर रहे हैं। उन कश्मीरियों के भी नहीं हैं जो "कश्मीरियत" के नाम पर पृथकतावादी बने हुए हैं, न किसी पाकिस्तानी राजनीतिक या हुक्मरान के, न उसकी सेना के किसी जनरल के और न उसके विध्वंसक कार्यों में लगी गुप्तचर संस्था आईएसआई के और न ही इस्लामी राज्य की स्थापना की नीयत से युद्धरत आईएसआई के। ये विचार हैं एक उर्दू समाचार पत्र के जिसका नाम है "जदीद इन दिनों" और जो नई दिल्ली, जयपुर, पटना, लखनऊ, मुम्बई और पश्चिम बंगाल से एक साथ प्रकाशित होने का दावा करता है। देश की राजधानी तथा इतने अधिक महत्वपूर्ण नारों से प्रकाशित इस समाचार पत्र में उपरोक्त अभिव्यक्ति को दो महीने हो रहे हैं लेकिन आश्चर्य यह है कि न तो केंद्रीय सरकार के गृह मंत्रालय या फिर प्रेस कौंसिल ने इस राष्ट्रद्रोही अभिव्यक्ति का कोई संज्ञान लिया है।

भारतीय संविधान में नागरिक अधिकारों की सुरक्षा गारंटी के अंतर्गत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी शामिल है लेकिन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देशद्रोह की अनुमति नहीं देती। इन दिनों संसद में कतिपय अभिव्यक्तियों पर हंगामी स्थिति बनी हुई है लेकिन किसी एक भाषा के समाचार पत्रों द्वारा इन दिनों जैसी अभिव्यक्ति की जा रही है उसकी ओर किसी का भी ध्यान नहीं जा रहा है। नरेंद्र मोदी सरकार को घेरने के लिए कतिपय व्यक्तियों की बहक को आधार बनाकर जो कुछ हो रहा है उसने ऐसी देशद्रोही भावनाओं को भड़काने वालों को खुलकर खेलने का अवसर प्रदान किया है। भारत में जहां सीमा पार से आतंकी घुसपैठ कर रहे हैं और उनके भीतर हस्तक बनने की होड़ लगी है वहीं वोट बैंक की राजनीति के लिए पश्चिम बंगाल में ऐसे तत्वों को संरक्षण प्रदान करने के लिए वहां की सत्ता ने जो उपक्रम किए हैं, उससे एक बात बहुत स्पष्ट है कि इस समय देश के सामने भयावह संकट है।

प्रधानमंत्री के सबका साथ सबका विकास मंत्र की भावना को प्रभावी होने से रोकने के उपक्रम में देशद्रोही आचरण और अभिव्यक्ति की बढ़ती घटनाएं चिंता का कारण होना चाहिए। हम सीमा पर अतिक्रमण का संकट झेल रहे हैं, माओवाद के नाम पर देश के पिछड़े वनवासी इलाकों में रहने वालों को बंधक बनाकर हिंसात्मक गतिविधियों से निपटने की चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। हमारे सैनिक और सुरक्षा कर्मी अपना बलिदान दे रहे हैं। इस स्थिति में संसद और उसके बाहर भी ऐसे विषयों की चर्चा के अतिरेक में जिनका कोई विशेष महत्व नहीं हैं– जो नजरदांज भी की जा सकती है– में उलझकर भयावह देशद्रोही माहौल पैदा करने वालों पर भारत के गृह मंत्रालय, उसकी सुरक्षा एजेंसियों की निगाह क्यों नहीं पड़ रही है। माना कि भारतीय जनता पार्टी और उसकी सरकार ने समाचार पत्रों को अभिव्यक्ति के

कारण प्रताड़ना से मुक्त रहने की वचनबद्धता पर कायम रहने का वादा किया है, लेकिन इस वचनबद्धता का लाभ देश की एकता अखंडता उसकी सार्वभौमिकता को आघात पहुंचाने के लिए किए जाने की छूट उसमें कैसे शामिल हो सकती है। हमारी गुप्तचर एजेंसियां नित्य ही बाह्य हमले और आंतरिक तोड़ फोड़ तथा आतंकवादी गतिविधियों के बारे में "इनपुट" दिया करती हैं, फिर उनकी आंखों में ऐसी भयावह अभिव्यक्ति क्यों ओझल है।

नई दिल्ली में एक संस्था है "भारत नीति प्रतिष्ठान" जो प्रत्येक पखवाड़े उर्दू समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों और विचारों को यथावत प्रस्तुत कर उनकी समीक्षा भी करती है। पंद्रह से बीस उर्दू समाचार पत्रों की प्रति पखवाड़े समीक्षा शामिल रहती हैं। उसका प्रकाशन सभी के लिए उपलब्ध है। यदि हमारी गुप्तचर संस्थाओं में कार्यरत लोगों को उर्दू नहीं आती तो वे हिंदी और अंग्रेजी में प्रकाशित इस संस्था के प्रकाशन का अवलोकन तो कर ही सकते हैं। खासकर ऐसे समय पर तो अवश्य ही उर्दू समाचार पत्रों पर निगाह पड़नी चाहिए जब वह प्रत्येक आतंक आरोपी को मुस्लिम उत्पीड़न के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। अभी हाल ही में बर्धमान में पकड़े गए आतंकियों के लिए उर्दू के एक समाचार पत्र ने लिखा कि भाजपा के इशारे पर गुप्तचर एजेंसियां मुसलमानों को बदनाम करने के लिए ऐसा हो रहा है। गुप्तचर एजेंसियां विश्वास के काबिल नहीं हैं। भारत सरकार के सूचना और प्रसारण मंत्रालय में भी एक ऐसी इकाई होती है जो समाचार पत्रों की समीक्षा करती है। यह इकाई क्या कर रही है। ऐसा लगता है कि देश के विघटन और नफरत पैदा करने तथा देशद्रोह की मानसिकता को बढ़ावा देने के "देसी" प्रयास की पूरी तरह उपेक्षा की जा रही है। राजनीतिक दल भारत के मुसलमानों को एक काल्पनिक भय दिखाकर उनका शोषण करते रहने पर ही आमादा हैं और उर्दू मीडिया मुसलमानों में पाकिस्तान परस्ती का खुल अभियान चला रही है। क्या उर्दू मीडिया के इस अभियान को नजरंदाज किया जाना देशहित में है।